ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 नवम्बर 2020
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२१
युगाब्द-५१२१, अंक-१३२, वर्ष-१३
कार्तिक विक्रमी २०७७ (नवम्बर 2020)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

सा मा सत्योक्तिः परि पातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनन्नहानि च। विश्वमन्यन्नि विशते यदेजति विश्वाहापो विश्वाहोदेति सूर्यः ॥ –ऋ० ७। ८। १२। २

व्याख्यान–हे सर्वाभिरक्षकेश्वर! (सा मा सत्योक्तिः) आपकी सत्य आज्ञा, जिस का हमने अनुष्ठान किया है, वह (विश्वतः परिपातु) हमको सब संसार से सर्वथा पालन, और सब दुष्ट कामों से सदा पथृक् रक्खे, कि कभी हमको अधर्म करने की इच्छा भी न हो। (द्यावा च) दिव्य सुख से सदा युक्त करके यथावत् हमारी रक्षा करे। (यत्र) जिस दिव्य सृष्टि में (अहानि) सूर्यादिकों को दिवस आदि के निमित्त (ततनन्) आपने ही विस्तारे हैं, वहाँ भी हमारा सब उपद्रवों से रक्षण करो। (विश्वमन्यत्) आपसे अन्य (भिन्न) विश्व अर्थात् सब जगत् जिस समय आपके सामर्थ्य से प्रलय में (नि विशते) प्रवेश करता है (कार्य सब कारणात्मक होता है), उस समय में भी आप हमारी रक्षा करो। (यदेजति) जिस समय यह जगत् आपके सामर्थ्य से चलित होके उत्पन्न होता है, उस समय भी सब पीड़ाओं से आप हमारी रक्षा करें। (विश्वाहापो विश्वाहा॰) जो–जो विश्व का हन्ता (दुःख देनेवाला) उसको आप नष्ट कर देओ। क्योंकि आपके सामर्थ्य से सब जगत् की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय होती है। आपके सामने कोई राक्षस (दुष्टजन) क्या कर सकता है? क्योंकि आप सब जगत् में उदित (प्रकाशमान) हो रहे हो। सूर्य्यवत् हमारे हृदय में कृपा करके प्रकाशित होओ। जिससे हमारी अविद्यान्धकारता सब नष्ट हो।

सम्पादकीय

ऋषि पथ....?

हम सभी जानते हैं कि दीपावली एक प्रकाश पर्व है, प्राणिमात्र के लिए भौतिक प्रकाश अर्थात् सूर्य, चन्द्र, विद्युत, दीपकादि का प्रकाश जितना आवश्यक है, उतना ही मनुष्यमात्र के लिए आवश्यक है- ज्ञान का प्रकाश। भौतिक प्रकाश के अभाव में प्राणिमात्र अन्धकार में रहने को विवश होता है, तो ज्ञान के आभाव में मनुष्यमात्र । अन्धकार में दुःख है तो अज्ञान में भी महादुःख है। दीपावली प्रतीक है कि- हम बाहर से आलोकित हों, प्रकाशित हों, तो ऋषि परम्परा हमें सिखाती आयी है कि- हम भीतर से अज्ञान को दूर करके ज्ञानवान होकर आलोकित हों, प्रकाशित हों और कहते भी सभी यही हैं। प्रायः हमारे देश में विधर्मियों को एवं मुठ्ठीभर नास्तिकों को छोड़ दिया जाए तो सभी और उनमें भी 'आर्य स्वयं' को ऋषियों का ही वंशज कहते हैं, ऋषियों के पथ का ही अनुगामी कहते हैं। इस पर गीत हैं, भजन हैं, प्रवचन हैं, व्याख्यान् हैं, घोषणाएँ हैं, संकल्प हैं, शपथ हैं। किन्तु! कार्य अर्थात् आचरण? आइए! कुछ विचार करते हैं- वर्तमान में सम्पूर्ण संसार की जनसंख्या सात अरब है, जिसमें एक अरब तीस करोड़ के लगभग की जनसंख्या हमारे देश में निवास करती है। इनमें से अधिक से अधिक आधी जनसंख्या ही अर्थात् लगभग पैंसठ करोड़ लोग ही ऋषि परम्परा को मानने वाले होंगे, जो कि भिन्न-भिन्न मान्यताओं में बंटे हैं, किन्तु किसी न किसी रूप में ऋषियों को अपना पूर्वज मानते ही हैं। उन पैंसठ करोड़ में से आर्य अर्थात् दृढ़ता से ऋषि ब्रह्मा से ऋषि दयानन्द पर्यन्त के प्रति वाणी से श्रद्धायुक्त कथन करने वाले लोग अधिक से अधिक सम्पूर्ण देश और विदेशों में भी मिलाकर लगभग दश लाख होंगे, उनमें भी यह ऋषि पथ क्या है? कैसा है? कितना कष्ट साध्य और कितना दुरुह हैं यह जानने वाले तो दो-तीन लाख तक ही सिमटकर रह जाते हैं इन दो-तीन लाख लोगों में भी जो स्वयं को ऋषि पथ का अनुगामी बताते हैं उनमें भी एक ही जयघोष, एक ही लक्ष्य की घोषणा करने वाले भिन्न-भिन्न चल रहे हैं, और बताते हैं कि- ''ऋषि पथ के अनुगामी हम हैं। क्या यह किसी आश्चर्य से कम है? उदाहरण- आर्य सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभाएँ, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाएं, इनमें भी सम्प्रति प्रतिनिधि ही प्रधान है, वे सभी प्रधान (मुख्य चार) ''ऋषि पथ'' पर चलने वाला स्वयं को बताते हैं, ऋषि कार्य करने की शपथ लेते हैं, कार्य तो .... बढ़ता नहीं, किन्तु प्रधान तो बढ़ते ही जाते

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष .... हैं। इन्हीं वीभत्सताओं से त्रस्त होकर ऋषि पथ के गुरुगम्भीर कार्य को विचारकर ही पूज्य आचार्य परमदेव मीमांसक जी के मार्गदर्शन में हम सभी ने 'ऋषि पथ' पर चलना स्वीकार किया और प्रगति पथ पर अग्रसर होकर ''आर्य महासंघ'' की स्थापना एवं संचालन प्रारम्भ किया। जिसके विभिन्न प्रकल्पों के रूप में आर्य निर्मात्री सभा, आर्य संरक्षिणी सभा, आर्य क्षत्रिय सभा, आर्य छात्र सभा, आर्य राज सभा, आर्य गुरुकुल, आर्या गुरुकुलादि चल रहे हैं। किन्तु इन तथाकथित प्रतिनिधि सभाओं के कुछ षड्यन्त्रकारी प्रतिनिधियों ने षड्यन्त्रपूर्वक हमारे 'आर्य महासंघ' से पृथक् राजनीति करने गए हुए थोड़े परिश्रम से बहुत पाने की लालसा से लालायित लोगों को अपने स्वार्थ साधना के जाल में फंसा लिया। जिसमें कुछ सर्वहित का संकल्प छोड़, स्वहित के संकल्प के साथ जा मिले। जब यह स्वहित पीपासु उन स्वार्थी प्रतिनिधि सभाओं से जा मिले। तब उन प्रतिनिधि सभाओं के नेताओं ने अपनी पीठ भी थपथपाई और घोषणापूर्वक कार्यक्रम भी आयोजित किया, किन्तु स्वहित पिपासुओं का दुर्भाग्य कि- लखनऊ से फरमान आया और स्वहित पिपासुओं के हित करने का दम्भ भरने वाले ही बर्खास्त हो गए। (सम्बन्धित समाचार सोसियल मीडिया पर उपलब्ध हैं।)

अब ये और वे सभी कह रहे हैं कि- हम ''ऋषि पथ'' पर चलेंगे, ऋषि का कार्य करेंगे। आश्चर्य है, यह भी यही कहते हैं और वह भी यही कहते हैं। अर्थात् चार गुट, चारों ''ऋषि पथ'' के अनुमागी, चारों एक-दूसरे के विरोधी, चारों कार्य करने की शपथ लेने वाले, कार्य हुआ? कार्य हो रहा है? कार्य होगा? नहीं। यह सब 'स्वहित' के लिए हैं, सर्वहित के लिए नहीं। स्वहित को ही स्वार्थ कहते हैं। अत: सावधान!

आर्य! आर्याओं! दीपावली ऋषि बलिदान दिवस भी है। ऋषिवर दयानन्द ने सहस्रों वर्षो से अज्ञान, अविद्या, अभाव, आलस्य और अन्धविश्वास से जकड़े हुए इन ऋषियों के अनुयायियों को जगाने और यथार्थ का दिग्दर्शन कराने के लिए जो परिश्रम किया, जो पुरुषार्थ किया, उसी के फलस्वरूप उनका बलिदान हुआ, अर्थात् उनके प्राण ले लिए गए। किन्तु जिस पथ को ऋषिवर दिखला गए, उसका उत्तरदायित्व अब ''आर्य महासंघ'' लेकर चल रहा है, इस पथ पर तप है, त्याग है और विद्या है, और यह सब स्वार्थ पर नहीं है, असत्य पर नहीं है, छल-कपट पर नहीं है, ठगी पर नहीं है। यह सत्य पर आधारित ऐसी प्रणाली है जिस पर चलने के लिए अनवरत परिश्रम चाहिए, असीम धैर्य चाहिए, उत्कट पुरुषार्थ करने का संकल्प चाहिए।

पिछले पन्द्रह वर्षों से यह सब हम सभी मिलकर कर रहे हैं, पन्द्रह वर्षों का काल अधिक नहीं होता, यदि इस काल को मानव जीवन पर लागू करके देखें- तो पन्द्रह वर्ष में तो मात्र दशवीं-बारहवीं की पढ़ाई का काल एक सम्भलने और सम्भालने का काल होता है। अत: हम सभी सम्भलें! सम्भालें! इस प्रकाश के पावन पर्व पर अपने ''ऋषि पथ'' के सिद्धान्तों का सिंहावलोकन करें! अपने द्वारा प्राप्त ज्ञान का अवलोकन करें! अपने द्वारा किए गए परिश्रम-पुरुषार्थ का अवलोकन करें! अपने द्वारा दिए गए सहयोग का और अपने द्वारा किए गए आचरण का भी अवलोकन करें! पुन: संकल्पित हों कि ऋषिवर का बलिदान व्यर्थ नहीं जाने देंगे, हम ऋषिपथ पर चल रहे हैं, और निरन्तर चलते रहेंगे।

ऋषि पथ पर चलने वाले, चलने की आकांक्षा करने वाले, अन्यों को चलाने की इच्छा रखने वाले प्रत्येक आर्य/आर्या अपने कर्तव्य को समझे। आर्य महासंघ के नेतृत्व में आगे बढ़े, संगठित हो, स्वार्थ को त्यागे। इससे आगे बढ़कर अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए त्याग के लिए भी तैयार रहे। ऋषि ने सर्वस्व बलिदान किया। उसके बाद भी अनेकों ने बलिदान दिये, स्वस्व का त्याग किया। आज भी कुछ लोग कर रहे हैं। अत: प्रत्येक आर्य/आर्या का कर्त्तव्य बनता है कि अपने द्वारा त्याग, अपना बलिदान सर्वस्व न सही, किसी न किसी रूप में, किसी न किसी माध्यम से अवश्य करें। वह त्याग या बलिदान अपने सामर्थ्य, समय, संसाधन का हो सकता है। जब प्रत्येक आर्य/आर्या अपना सहयोग ऋषि पथ के लिए समर्पित करेगा तो लक्ष्य की ओर और अधिक गति से बढ़ा जा सकेगा क्योंकि अनेकों का सामर्थ्य मिलकर बहुत बड़ा सामर्थ्य बनता है जो बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आवश्यक है।

1 नवम्बर - 30 नवम्बर 2020 कार्तिक ऋतु- हेमन्त

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
रोहिणी शुक्ल पूर्णिमा 30 नवम्बर	दीपावली पर्व व ऋषि बलिदान दिवस 15 नवम्बर					भरणी कृष्ण प्रतिपदा 1 नवम्बर
कृत्तिका कृष्ण द्वितीया 2 नवम्बर	रोहिणी कृष्ण तृतीया 3 नवम्बर	मृगशिरा कृष्ण चतुर्थी 4 नवम्बर	आर्द्रा कृष्ण पंचमी 5 नवम्बर	आर्द्रा कृष्ण षष्ठी 6 नवम्बर	पुनर्वसु कृष्ण षष्ठी 7 नवम्बर	पुष्य कृष्ण सप्तमी 8 नवम्बर
आश्लेषा कृष्ण अष्टमी/नवमी 9 नवम्बर	मघा/पू० फाल्गुनी कृष्ण दशमी 10 नवम्बर	उ० फाल्गुनी कृष्ण एकादशी 11 नवम्बर	हस्त कृष्ण द्वादशी 12 नवम्बर	चित्रा कृष्ण त्रयोदशी 13 नवम्बर	स्वाति कृष्ण चतुर्दशी 14 नवम्बर	विशाखा कृष्ण अमावस्या 15 नवम्बर
अनुराधा शुक्ल प्रतिपदा/द्वितीया 16 नवम्बर	ज्येष्ठा शुक्ल तृतीया 17 नवम्बर	मूल शुक्ल चतुर्थी 18 नवम्बर	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल पंचमी 19 नवम्बर	उत्तराषाढ़ा शुक्ल षष्ठी 20 नवम्बर	श्रवण शुक्ल सप्तमी 21 नवम्बर	धनिष्ठा शुक्ल अष्टमी 22 नवम्बर
शतभिषा शुक्ल नवमी 23 नवम्बर	पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल दशमी 24 नवम्बर	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल एकादशी 25 नवम्बर	रेवती शुक्ल द्वादशी 26 नवम्बर	अश्विनी शुक्ल द्वादशी 27 नवम्बर	भरणी शुक्ल त्रयोदशी 28 नवम्बर	कृत्तिका शुक्ल चतुर्दशी 29 नवम्बर

1 दिसम्बर - 30 दिसम्बर-2020 मार्गशीर्ष ऋतु- हेमन्त

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
	रोहिणी कृष्ण प्रतिपदा 1 दिसम्बर	मृगशिरा कृष्ण द्वितीया 2 दिसम्बर	आर्द्रा कृष्ण तृतीया 3 दिसम्बर	पुनर्वसु कृष्ण चतुर्थी 4 दिसम्बर	पुष्य कृष्ण पंचमी 5 दिसम्बर	आश्लेषा कृष्ण षष्ठी 6 दिसम्बर
मघा कृष्ण सप्तमी 7 दिसम्बर	पू० फाल्गुनी कृष्ण अष्टमी 8 दिसम्बर	उ० फाल्गुनी कृष्ण नवमी 9 दिसम्बर	हस्त कृष्ण दशमी 10 दिसम्बर	चित्रा/स्वाति कृष्ण एकादशी 11 दिसम्बर	विशाखा कृष्ण द्वादशी/त्रयोदशी 12 दिसम्बर	अनुराधा कृष्ण चतुर्दशी 13 दिसम्बर
ज्येष्ठा कृष्ण अमावस्या 14 दिसम्बर	मूल शुक्ल प्रतिपदा 15 दिसम्बर	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल द्वितीया 16 दिसम्बर	उत्तराषाढ़ा शुक्ल तृतीया 17 दिसम्बर	श्रवण शुक्ल चतुर्थी 18 दिसम्बर	धनिष्ठा शुक्ल पंचमी 19 दिसम्बर	शतभिषा शुक्ल षष्ठी 20 दिसम्बर
पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल सप्तमी 21 दिसम्बर	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल अष्टमी 22 दिसम्बर	रेवती शुक्ल नवमी 23 दिसम्बर	अश्विनी शुक्ल दशमी 24 दिसम्बर	अश्विनी शुक्ल एकादशी 25 दिसम्बर	भरणी शुक्ल द्वादशी 26 दिसम्बर	कृत्तिका शुक्ल त्रयोदशी 27 दिसम्बर
रोहिणी शुक्ल चतुर्दशी 28 दिसम्बर	मृगशिरा शुक्ल चतुर्दशी 29 दिसम्बर	आर्द्रा शुक्ल पूर्णिमा 30 दिसम्बर	रामप्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस 19 दिसम्बर	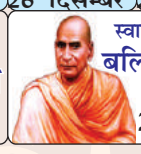 स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस 23 दिसम्बर		

वर्ण व्यवस्थाः डॉ. अम्बेडकर बनाम वैदिक मत-५

-सोनू आर्य, हरसौला

''वेदों की अप्रवृति होने का कारण महाभारत युद्ध हुआ। इन की अप्रवृति से अविद्या-अन्धकार के भूगोल में विस्तृत होने से मनुष्यों की बुद्धि भ्रमयुक्त होकर जिस के मन में जैसा आया वैसा मत चलाया'' आगे पेज 277 पर- ''विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार नष्ट हो चला ....। जब ब्राह्मण लोग विद्याहीन हुए तब क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के अविद्वान् होने में तो कथा ही क्या कहनी? .... केवल जीविकार्थ पाठमात्र ब्राह्मण लोग पढ़ते रहे सो पाठमात्र भी क्षत्रिय आदि को न पढ़ाया .... ब्राह्मणों ने विचारा कि अपनी जीविका का प्रबन्ध बांधना चाहिये। जो-जो पूर्ण विद्या वाले धार्मिकों का नाम ब्राह्मण और पूजनीय वेद ओर ऋषि-मुनियों के शास्त्र में लिखा था उन को अपने मूर्ख, विषयी, कपटी, लम्पट, अधर्मियों पर घटा बैठे। भला वे आप्त विद्वानों के लक्षण इन मूर्खों में कब घट सकते हैं? परन्तु जब क्षत्रियादि यजमान संस्कृत विद्या से अत्यन्त रहित हुए तब उनके सामने जो-जो गप्पमारी सो सो बिचारों ने सब मान ली। तब इन नाममात्र ब्राह्मणों की बन पड़ी। सबको अपने वचन जाल में बांधकर वशीभूत कर लिया ..... अर्थात् जो गुण, कर्म, स्वभाव से ब्राह्मणादि वर्ण व्यवस्था थी उसको नष्ट कर जन्म पर रक्खी और मृतकपर्यन्त का भी दान यजमानों से लेने लगे। जैसी अपनी इच्छा हुई वैसा करते चले पुनः यथेष्टाचार करने अर्थात् ऐसे कड़े नियम चलाये कि उन पोपों की आज्ञा के बिना सोना, उठना, बैठना, जाना, आना, खाना, पीना, आदि भी नहीं कर सकते थे। राजाओं को ऐसा निश्चय कराया कि पोप संज्ञक कहने मात्र के ब्राह्मण साधु चाहे सो करें। उनको कभी दण्ड न देना अर्थात् उन पर मन में भी दण्ड देने की इच्छा न करनी चाहिये।'' अपने अध्ययन के आधार पर डॉ. अम्बेडकर ने जो निश्चय किया था वही महर्षि दयानन्द ने भी अपने सत्यार्थ प्रकाश में किया है। यानि महाभारत काल के बाद की विकृत व्यवस्था के कड़वे यथार्थ पर डॉ. अम्बेडकर ओर वैदिक मतानुयाइयों में कोई विरोधाभास नहीं है।

तृतीयः- डॉ. आम्बेडकर की एक आपत्ति है कि मनु की दण्ड व्यवस्था में ब्राह्मणों को विशेष रियायत है अर्थात् उन्हें बड़े-बड़े अपराध के लिए भी अति न्यून अथवा न के बराबर दण्ड का विधान है। हमने (मनु-8/337-338) पूर्व में जो वर्णन किया। डॉ. आम्बेड़कर अपनी पुस्तक में ठीक इससे उल्ट श्लोक देकर यह आपत्ति करते हैं इसी के साथ-साथ चौथी आपत्ति के प्रथम बिन्दु में सामाजिक असमानता की कसौटी पर हिन्दुत्व उपयुक्त नहीं क्योंकि वर्ण व्यवस्था में उच्च वर्णो को विशेषाधिकार प्राप्त है। आइए इन आपत्तियों पर विचार करते हैं। आर्ष मनुस्मृति के डॉ. अम्बेडकर के आक्षेप के बिल्कुल प्रतिकूल श्लोक का वर्णन पहले किया जा चुका है। मनुस्मृति का ही प्रमाण देकर महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास पेज 173 पर लिखते है- जिस अपराध में साधारण मनुष्य पर एक पैसा दण्ड़ हो उसी अपराध में राजा को सहस्र पैसा दण्ड होवे अर्थात् साधारण मनुष्य से राजा को सहस्र गुणा दण्ड होना चाहिए। मन्त्री अर्थात् राजा के दीवान को आठ सौ गुणा उससे न्यून को सात सौ गुणा और उसे भी न्यून को छः सौ गुणा इसी प्रकार उत्तर-उत्तर अर्थात् जो एक छोटे से छोटा भृत्य अर्थात् चपरासी है उसको आठ गुणे दण्ड से कम न होना चाहिए। क्योंकि यदि प्रजापुरुषों से राजपुरुषों को अधिक दण्ड़ न होवे तो राजपुरुष प्रजा पुरुषों का नाश कर देवें, जैसे सिंह अधिक और बकरी थोड़े से दण्ड़ से ही वश में आ जाती है। इसलिये राजा से लेकर छोटे से छोटे भृत्य पर्यन्त राजपुरुषों को अपराध में प्रजापुरुषों से अधिक दण्ड होना चाहिए। इसी प्रकार महाभारत में अज्ञानी (नामधारी) ब्राह्मण के विषय में वर्णन इस प्रकार है।

''जैसे लकड़ी का हाथी और चर्म निर्मित मृग होते हैं वैसे ही वेद शास्त्रों से हीन ब्राह्मण होता है। ये तीनों नाममात्र धारण करते हैं। (नाम के अनुसार काम नहीं देते) जैसे नपुंसक मनुष्य स्त्रियों से समागम करके निष्फल होता है, गाय गाय से ही संयुक्त होने पर कोई फल नहीं दे सकती ओर बिना पंख का पक्षी उड़ नहीं सकता, वैसे ही वेदमन्त्रों के ज्ञान से शून्य ब्राह्मण भी व्यर्थ होता है। जैसे अन्न से रहित ग्राम, जलहीन कुंआ और राख में दी हुई आहुति व्यर्थ होती है, वैसे ही मूर्ख ब्राह्मण को दिया हुआ दान भी व्यर्थ होता है।

भीष्म जी कहते हैं- जो मन ओर इन्द्रियों को संयम में रखने वाला सोमयाग करके सोमरस पीने-वाला, निष्काम, सरल, मृदु, कोमल, क्रूरता रहित और क्षमाशील हो, वही ब्राह्मण कहलाने योग्य है। इन गुणों से रहित जो पापाचारी है, उसे ब्राह्मण नहीं समझना चाहिए। (शान्ति प. 63/2-5) संक्षेप में आर्ष मनुस्मृति में ब्राह्मण व क्षत्रिय उच्चवर्णों को अधिकांश दण्ड का प्रावधान है तथा महाभारत में ज्ञानशून्य ब्राह्मण की कटु शब्दों में आलोचना की गई है। उक्त श्लोंको को देखकर कोई भी विज्ञजन वैदिक व्यवस्था में विशेषाधिकार की बात स्वीकार नहीं करेगा। भारतीय संविधान के भाग 3 में अनुच्छेद 14 से 18 में सकारात्क कार्यवाही के अन्तर्गत पिछड़े एवं वंचित समूहों (स्त्री, दलित, अश्वेत आदि) को विशेष रियायतें दी गई हैं किन्तु फिर भी वह समानता के अधिकार का उलंघन नहीं माना जाता। न केवल भारत अपितु विश्व की सभी व्यवस्थाओं में विशिष्टि वर्ग स्वयमेव उभर आता है। यहाँ तक कि समाजवादी संघ (यूएसएसआर) में भी नौकरशाही स्वयं को जनसाधारण से विशिष्ट समझने लगती है। अतः पूर्णतः सामाजिक समानता तथा विशेषाधिकार वर्ग का नितान्त अभाव विश्व की किसी भी व्यवस्था में सम्भव नहीं है। भारतीय वर्ण व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में देखें तो प्रथम तो विषेशाधिकार उच्चवर्ग (ब्राह्मण, क्षत्रिय) को है ही नहीं जैसा कि पूर्व वर्णन किया जा चुका है। दूसरा अगर डॉ. आम्बेडकर मानते हैं। तो वह (विशेष सम्मान मात्र) योग्यताधारित है न कि जन्मजात। हाँ महाभारत के बाद की विकृत वर्ण व्यवस्था पर डॉ. आम्बेड़कर की आपत्ति युक्तियुक्त है, एक उस पर वैदिक धर्मियों की राय डॉ. आम्बेडकर द्वारा उठाई गई चतुर्थ आपत्ति के प्रथम बिन्दु समाजिक समानता पर चर्चा हम कर चुके है। तीसरे बिन्दु के अनुसार डॉ. आम्बेड़कर कहते है। कि हिन्दू धर्म व्यवस्था में आर्थिक सुरक्षा नहीं है। मनुष्य को व्यवसाय की स्वतन्त्रता हिन्दुत्व में नहीं है। मुख्यतः शूद्र अन्य वर्णों का आश्रित रह जाता है। अब विचार करते है कि शूद्र को क्या कोई आर्थिक अधिकार प्राप्त था अथवा वह अन्य वर्णों पर ही आश्रित था व्यवसाय की योग्यतानुसार स्वतन्त्रता का वर्णन पहले किया जा चुका है योग्यतानुसार ही योग्य शूद्र भी अन्य वर्णों के कार्यो का अधिकार पा लेता था। वर्ण परिवर्तन के दृष्टान्त हम पढ़ चुके हैं। अब अयोग्यता के कारण ही जो शूद्र रह गया है, उसके अधिकार का वर्णन डॉ. आम्बेड़कर स्वयं शूद्र कौन पेज 76 पर कोटिल्य का मत उद्घृत करके इस प्रकार करते हैं- छल से दास के धन का हरण करने अथवा आर्य होने के विशेषाधिकारों से वंचित करने का दण्ड एक आर्य का वध करने के दण्ड का आधा होगा। एक दास (शूद्र आर्य) अपने स्वामी के कार्य को बिना क्षति पहुँचाए अपने द्वारा उपार्जित धन - सम्पत्ति के साथ-साथ पैतृक सम्पदा का भी अधिकारी होगा।''

क्रमश ....

सहज सरल सांख्य-६

- आचार्य सतीश, दिल्ली

सत्कार्यवाद को विस्तार से समझने के लिए शास्त्रकार चार हेतु देता है।

कार्य के लिए निश्चित उपादान का होना आवश्यक है। चाहे जिस कार्य के लिए चाहे जिस उपादान को ग्रहण नहीं किया जाता। जैसे कपड़ा बनाने के लिए सूत का उपादान और घड़े के लिए मिट्टी का उपादान किया जाता है, अन्य का अन्य के लिए। यदि ऐसा न हो तो फिर चाहे जिस कार्य की चाहे जिस कारण से उत्पत्ति हो जानी चाहिए।

अत: सब कारणों से सब समय पर सब कार्यों की उत्पत्ति सम्भव नहीं अपितु जो जिसमें उपादान है उसी से उसकी उत्पत्ति होती है।

कोई भी कारण किसी विशेष कार्य को उत्पन्न करने की शक्ति रखता है कार्य मात्र की नहीं। कार्य विशेष का उत्पाद शक्य कारण से ही हो सकता है जहाँ उसका पूर्व में ही सद्भाव है।

कार्य का अस्तित्व कारण से अलग नहीं होता, जैसा कारण होता है वैसा ही कार्य होता है, जैसे- आम से आम, गेहूँ से गेहूँ, धान से धान। इस प्रकार कार्य के अभिव्यक्त न होने पर भी कारण रूप में उसका अस्तित्व बना हुआ है।

सत्कार्य सिद्धान्त के अनुसार यदि कारण में कार्य विद्यमान है तो फिर कार्य की उत्पत्ति व्यवहारसंगत कैसे होगी? अर्थात् जब कार्य पहले से ही विद्यमान है तो उसकी उत्पत्ति कैसे होगी?

यद्यपि कारण रूप में कार्य विद्यमान है, परन्तु कार्य के अभिव्यक्त होने पर ही कार्य सम्बन्धी समस्त व्यवहार सम्पन्न होते हैं। यदि ऐसा न हो तो प्रलय अवस्था में ही समस्त जगत का व्यापार होता रहना चाहिए। अत: कारण में कार्य सत्ता होते हुए भी व्यवहार तभी सम्भव है जब कार्य की अभिव्यक्ति होती है। जैसे मिट्टी में घट की सत्ता होते हुए भी उसमें जल संग्रहण तभी है जब वह घट के रूप में अभिव्यक्त होती है। यदि कार्य की कारण में सत्ता ही न हो तो फिर अभिव्यक्ति संभव ही नहीं।

क्या कार्य के ध्वंस की स्थिति में कार्य का सर्वात्मना नाश हो जाता है?

अभिव्यक्ति अवस्था में आने के बाद जब वस्तु अपने उस रूप का त्याग करती है तब या तो उससे किसी कार्यान्तर की अभिव्यक्ति हो जाती है अन्यथा वह अपनी कारण अवस्था में चली जाती है। वस्तुत: किसी कार्य वस्तु का सर्वात्मना नाश या अभाव कभी नहीं होता।

अभिव्यक्ति अपने अस्तित्व से पहले सत् है या असत् है? यदि सत् है तो कारणावस्था में कार्य की प्रतीति और समस्त व्यवहार हो जाना चाहिए, यदि असत् है तो असत् से सद्रूप में आकर अभिव्यक्ति कैसी?

अभिव्यक्ति, अनभिव्यक्ति और पुन: अभिव्यक्ति में एक परम्परा, एक व्यवस्थित क्रम देखा जाता है। जब कोई वस्तु कार्यरूप में परिणत हो जाती है तो वह उसी अवस्था में रहते हुए उसी रूप में पुन: परिणत नहीं हो सकती। जैसे मिट्टी से घड़ा बनता है, घड़े से घड़ा नहीं बन सकता, या बीज से अंकुर और अंकुर से बीज होता है। अत: कारण में कार्य की अभिव्यक्ति का अस्तित्व उसके अनभिव्यक्ति के रूप में विद्यमान है।

अभिव्यक्ति को ही उत्पत्ति कहा जा सकता है। उत्पत्ति में भी एक बार कार्य उत्पत्ति होने पर उसकी उसी रूप में उत्पत्ति की आवश्यकता नहीं रहती या यूं कहें कि संभव ही नहीं।

कार्य से कारण का पता चलता है तो कार्य का स्वरूप क्या है?

कोई कार्य हो वह किसी न किसी कारण से उत्पन्न होता है। कारण, अनित्य, क्रियावत्, अनेक, आश्रित- यह सब कार्य का स्वरूप है, यह सब कार्य में होता है, मूल कारण में नहीं होता।

कारण में कार्य का अस्तित्व होते हुए भी कार्य कारण में भेद स्पष्ट दिखाई देता है। जैसे मिट्टी और घड़े में, हांलकि घट मिट्टी है पर साधारण मिट्टी से उसका आकार-प्रकार कुछ विशेष है। गुण की दृष्टि से भी देखें तो घट में जलाहरण आदि गुण सामान्य रूप से देखे जाते हैं। प्रलय में मूल प्रकृति कारण रूप अलग और सर्ग में सृष्टि रूप में अलग दिखाई देती है। यह भेद-मूलक कार्यरूप है।

लेकिन दोनों में साधर्म्य भी है। कारण-कार्य दोनों त्रिगुणात्मक अचेतन, अविवेकी, विषयी व परिणामी हैं। ये मूल कारण और उसके कार्य दोनों में साधर्म्य है।

लेकिन प्रकृति सत्व, रजस्, तमस् उनमें वैधर्म्य क्या है?

मुख्यतया सत्व प्रीतीस्वरूप, रजस् अप्रीतिस्वरूप और तमस् विषादस्वरूप है। और विस्तार करें तो सत्व की अन्य विशेषताएँ प्रसन्नता, लाघव, विराग, तितिक्षा, संतोष, सुख आदि हैं, रजस् की शोक, तृष्णा, ईर्ष्या, दुख आदि तमस् की निद्रा, प्रमाद, मोह आदि हैं।

सत्व, रजस्, तमस् एक व्यक्तिरूप नहीं अर्थात् उनमें अनेकत्व है क्योंकि लघुत्व आदि धर्मों का सत्व में, चलत्व आदि रजस् में तथा गुरुत्व आदि का तमस् में साधर्म्य है। इसी प्रकार लघुत्व आदि का रजस् व तमस् में, चलत्व का सत्व व तमस् में तथा गुरुत्व आदि का सत्व व रजस् में वैधर्म्य है।

तो फिर महत् आदि तत्व कार्य कैसे हुए?

चेतन और मूल प्रकृति से भिन्न होने के कारण से यह कार्य है जैसे प्रत्यक्ष में दृश्यमान घटादि पदार्थ कार्य हैं।

साथ ही परिमित या परिणाम या इयत्ता होने से भी यह कार्य है।

इसके अलावा जैसे प्रत्येक घट भिन्न होते हुए भी मृतिका रूप में सब में समानता है, समस्त महत् सुख, दुख, मोहरूप त्रिगुण के विकार होने से कार्य है अर्थात् कार्य रूप में भिन्न होते हुए भी उनमें कारण रूप में समानता उनका कार्य होना सिद्ध करती है।

क्रमश ....

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	15 नवम्बर	दिन-रविवार	मास-कार्तिक	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-विशाखा
पूर्णिमा	30 नवम्बर	दिन-सोमवार	मास-कार्तिक	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-रोहिणी
अमावस्या	14 दिसम्बर	दिन-सोमवार	मास-मार्गशीर्ष	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-ज्येष्ठा
पूर्णिमा	30 दिसम्बर	दिन-बुधवार	मास-मार्गशीर्ष	ऋतु-हेमन्त	नक्षत्र-आर्द्रा

गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-१६

- आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर

क्या विद्वान् पृथक् भाव वाले नहीं होते? सामान्यतया देखते हैं कि ये लोग भी सामान्य जन की ही भाँति किसी न किसी विषय पर लड़ते झगड़ते देखे जाते हैं। पुन: किस प्रकार से ये पृथक भाव वाले नहीं होते? किसी एक विषय को लेकर विद्वानों में भी मतभेद होना स्वाभाविक है किन्तु सामने प्रबल तर्क वा प्रमाण उपस्थित हो जाने पर उनका परस्पर भाव एक ही हो जाता है। साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि सत्य को जानना और ग्रहण करने के प्रति सचेत रहना विद्वानों में होना ही चाहिए इसके न होने का अर्थ है कि वे विद्या के मर्म को जाने ही नहीं। परस्पर में द्वेष तो किसी को भी नहीं रखना चाहिए, पुन: विद्वान तो उसके परिणाम को जानते हैं। विद्वान स्वार्थ आदि दोषों के परिणाम को भी जानते हैं अत: अपेक्षा की जाती है कि वे इस प्रकार के दोषों में फँसकर भिन्न मत वाले नहीं बनेंगे, यदि फिर भी कोई इस विरूद्धवाद में पडता है तो जान लो कि उसने विद्वता का चोला मात्र ही ओढ़ रखा है वास्तव में वह अविद्या में ही विचरण कर रहा है। वास्तविक विद्वान परस्पर में विरूद्ध मत वाले नहीं होते। यहाँ मुख्य बात यह है कि ईश्वर की आज्ञा है परस्पर प्रीति से वर्तकर बडे धनैश्वर्य को प्राप्त होना है। इसे दो प्रकार से समझा जा सकता है, प्रथम- वही धन व ऐश्वर्य बडा है जो परस्पर प्रीति पूर्वक व्यवहार करके प्राप्त किया गया है, द्वितीय- धनैश्वर्य को प्राप्त करने के लिए परस्पर प्रीति पूर्वक व्यवहार आवश्यक है क्योंकि विरूद्धवाद और द्वेष पूर्वक अर्जित किया गया धनैश्वर्य अर्थ नहीं अनर्थ ही है और अनर्थ अर्थवत् संग्रह करने के योग्य नहीं होता है।

परस्पर का यह विरूद्धवाद अत्यन्त त्याज्य है इसी लिए परमदयालु परमात्मा ने बारम्बार इसके लिए हमे अपनी आज्ञा में सचेत किया है यथा-

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्त: सधुराश्चरन्त:।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान्व: संमनसस्कृणोमि॥

-अथर्व.३।३०।५

समानि प्रपा सह वोऽअन्नभाग: समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
सम्यञ्चोऽग्निं सपयतारा नाभिमिवाभित:॥ -अथर्व.३।३०।६

सध्रीचीनान्व: संमनसस्कृणोम्येकश्रुष्टीन्संवननेन सर्वान्।
देवा इवामृतं रक्षमाणा: सायंप्रात: सौमनसो वो अस्तु॥ -अथर्व.३।३०।७

उक्त मन्त्रों का ऋषि दयानन्द कृत अर्थ क्रमश: लिखते हैं- (ज्यायस्वन्त:०) हे गृहस्थादि मनुष्यों! तुम उत्तम विद्यादिगुणयुक्त, विद्वान् सज्ञान, धुरंधर होकर विचरते, और परस्पर मिलके धन-धान्य राज्यसमृद्धि को प्राप्त होते हुए विरोधी वा पृथक भाव मत करो। एक दूसरे के लिए सत्य मधुर भाषण करते हुए एक दूसरे को प्राप्त होओ। इसीलिये समान लाभालाभ से एक दूसरे के सहायक, ऐकमत्य वाले तुम को करता हूँ। अर्थात् मै ईशवर तुमको जो आज्ञा देता हूँ, इसको आलस्य छोडकर किया करो।

(समानी प्रपा) हे गृहस्थादि मनुष्यों! मुझ ईश्वर की आज्ञा से तुम्हारा जलपान स्नानादि का स्थान आदि व्यवहार एक सा हो। तुम्हारा खान-पान साथ-साथ हुआ करे। तुम्हारे एक से अश्वादि यान के जोते संगी हों और तुम को मैं धर्मादि व्यवहार में भी एकीभूत करके नियुक्त करता हूँ। जैसे चक्र के आरे चारों ओर से बीच के नाल रूप काष्ठ में लगे रहते हैं, अथवा जैसे ऋत्विज् लोग और यजमान यज्ञ में मिलके अग्नि आदि के सेवन से जगत का उपकार करते हैं, वैसे सम्यक् प्राप्ती वाले तुम मिलके धर्मयुक्त कर्मों को और एक-दूसरे का हित सिद्ध किया करो।

(सध्रीचीनान्व:) हे गृहस्थादि मनुष्यों! मैं ईश्वर तुमको सह वर्तमान, परस्पर के लिए हितैषी, एक ही धर्मकृत्य में शीघ्र प्रवृत्त होने वाले सब को धर्मकृत्य के सेवन के साथ एक-दूसरे के उपकार में नियुक्त करता हूँ। तुम विद्वानों के समान व्यावहारिक वा पारमार्थिक सुख की रक्षा करते हुए सन्ध्या और प्रात:काल अर्थात सब समय में एक दूसरे से प्रेमपूर्वक मिला करो। ऐसे करते हुए तुम्हारा मन का आनन्दयुक्त शुद्धभाव सदा बना रहे। ईश्वर की आज्ञा है कि गृहस्थ लोग उत्तमोत्तम गुणों को धारण कर गुणवान बने, गृहस्थों को अवश्य ही गुणवान होना चाहिए। विद्वान् उत्तम सिद्धान्तों से युक्त होकर धुरन्धर अर्थात् उत्तरदायित्वों को वहन करने वाले इस प्रकार से बनो कि राज्यादि सुखों को प्राप्त करो। परन्तु यह सब परस्पर वैर विरोध किये बिना ही होना चाहिए। परस्पर में वैर भाव रखने वाले कभी भी बड़े सुखों के भागी नहीं हो सकते, इसलिए सवधान रहने की आवश्यकता है कि आपस में व्यवहार करते समय सुमधुर सत्य ही का प्रयोग करें। भाषा का सुमधुर होना आवश्यक इस कारण से है क्योंकि कर्कश और कठोर हिताकारक सत्य को भी ग्रहण करने वाले लोग दुर्लभ होते हैं। परन्तु स्मरण रहे मधुरता के लोभ में सत्य का स्थान असत्य न लेले, कठोर से कठोरतम सत्य को भी मनुष्य समय बीतने पर समझ ही लेता है लेकिन असत्य का घात बने बनाये संबन्धों को भी बिखेर कर रख देता है अत: जब भी अपस में मिलो हृदय में मधुरता और सत्य के ही आश्रय रहना हितकर है। हानि वा लाभ में एक-दूसरे के सहयोगी रहते हुए ईश्वर की इस आज्ञा का पालान सावधान होकर करो इसमें तत्पर रहो, ढीले मत पडो।

मनुष्य ने अपना मनुष्यपन छोड़कर खूब भेदभाव और विरोध खड़े किये हैं, ऊँच-नीच, छूआछूत की भावना हो, शोषित और शोषक की शत्रुता आदि ईश्वराज्ञा न मानने के कारण ही उपजी व बड़ी हुई है। जबकि ईश्वर की आज्ञा एकता को आचरण में लाने की है। वेदाज्ञा तो जलपान, भोजन का स्थान व यान सब एक समान अर्थात् सामुहिक रखने की है इसके साथ ही परमात्मा की यह पवित्र वाणी कहती है कि सभी मनुष्यों को मैने समान उत्तरदायित्वों में बाँधा है।

समान उत्तरदायित्वों से तात्पर्य मेरे विचार में सामाजिक सर्वहितकारी कार्यों से है, किंतु गृहस्थ संबंधों मे समान उत्तरदायित्व से तात्पर्य गृहस्थ की जिम्मेदारियों से है। ये उत्तरदायित्व पत्नि व पति के साझे हैं, यहाँ एक-दूसरे पर थोपकर बचा नहीं जा सकता। ऐसे इस भार को ग्रहण करो जैसे चक्र के आरे उसकी नाभी में जुड़कर क्रमश: एक-दूसरे का भार अपने ऊपर लेते रहते हैं, इस प्रकार परस्पर के सहयोग से संगठन रूप यज्ञ का निर्माण होता है इसको बनाने व बढ़ाने हारे लोग ऋत्विजों की भाँति परोपकारी पुरोहित बन जाते हैं। क्योंकि संगठन बनाने व बढ़ाने हारे लोग याज्ञिक हैं तो निश्चित ही इस सांगठनिक यज्ञ को भंग करने वाले लोग असुर आदि राक्षस हैं।

क्रमश ....

गौकरुणानिधिः - गौ आदि पशुओं की रक्षा के लिये ऋषि का संदेश

ऋषि दयानन्द ने वेद के सिद्धान्तों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अन्य कार्यों के साथ-साथ एक पूर्णकालिक लेखक के रूप में भी अनेकों ग्रन्थों की रचना की है। उन्होंने विशुद्ध व्याकरण के ग्रन्थों से लेकर वेदभाष्य तक व सत्यार्थ प्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ से लेकर गायादि पशुओं की रक्षा व उपयोगिता के लिए गौकरुणानिधि जैसी सामान्य जन के लिए भी अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। ऋषि ने इस पुस्तक में गायादि पशुओं के पूरे अर्थशास्त्र को, उनकी उपयोगिता को दर्शाया है तथा समीक्षा भाग में मांसाहार व मद्यपान आदि की निस्सारता व हानियों को दर्शाया है। वहीं दूसरी ओर नियमादि देकर कृषि तथा पशुओं की उन्नति का मार्ग प्रदर्शित किया है।

यहाँ प्रस्तुत है गौकरुणानिधि पुस्तक, आईये इसका स्वाध्याय करते हैं। ध्यान से पढ़ें तथा विचार करें कि यदि हम ऋषि के बताए अनुसार गायादि पशुओं की रक्षा करते हैं, उनका उपयोग लेते हैं तो न केवल पूरे राष्ट्र को अपितु एक एक व्यक्ति व एक एक परिवार स्मृद्धि को प्राप्त हो सकता है। यही मार्ग हमारी आर्थिक उन्नति का मूल है तथा इसको अपनाकर हम पाप से भी बच सकते हैं।

गतांक से आगे ...

[मद्यपान का निषेध]

मद्य भी मांस खाने का ही कारण है, इसीलिये यहाँ संक्षेप से लिखते हैं-

प्रमत्त-कहोजी! मांस छूटा सो छूटा, परन्तु मद्य पीने में तो कोई दोष नहीं?

शान्त-मद्य पीने में भी वैसे ही दोष हैं जैसे मांस खाने में। मनुष्य मद्य पीने से नशे के कारण नष्ट-बुद्धि होकर अकर्त्तव्य कर लेता, और कर्त्तव्य को छोड़ देता है। न्याय का अन्याय और अन्याय का न्याय आदि विपरीत कर्म करता है। और मद्य की उत्पत्ति विकृत पदार्थों से होती है, और वह मांसाहारी अवश्य हो जाता है। इसलिए इसके पीने से आत्मा में विकार उत्पन्न होते हैं

और जो मद्य पीता है, वह विद्यादि शुभ गुणों से रहित होकर उन दोषों में फँसकर अपने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलों को छोड़ पशुवत् आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि कर्मों में प्रवृत्त होकर अपने मनुष्य-जन्म को व्यर्थ कर देता है। इसलिए नशा अर्थात् मदकारक द्रव्यों का सेवन कभी न करना चाहिए।

जैसा मद्य है, वैसे भाँग आदि पदार्थ भी मादक हैं, इसलिए इनका सेवन कभी न करे। क्योंकि ये भी बुद्धि का नाश करके प्रमाद, आलस्य और हिंसा आदि में मनुष्य को लगा देते हैं। इसलिए मद्यपान के समान इनका भी सर्वथा निषेध ही है।

इसलिए हे धार्मिक सज्जन लोगो ! आप इन पशुओं की रक्षा तन-मन और धन से क्यों नहीं करते ? हाय!! बड़े शोक की बात है कि जब हिंसक लोग गाय, बकरे आदि पशु, और मोर आदि पक्षियों को मारने के लिए ले-जाते हैं, तब वे अनाथ तुम-हमको देखके राजा और प्रजा पर बड़ा शोक प्रकाशित करते हैं कि-

"देखो, हमको विना अपराध बुरे हाल से मारते हैं। और हम रक्षा करने तथा मारनेवाले को भी दूध आदि अमृत पदार्थ देने के लिए उपस्थित रहना चाहते हैं, और मारे जाना नहीं चाहते। देखो, हम लोगों का सर्वस्व परोपकार के लिए है, और हम इसीलिये पुकारते हैं कि हमको आप लोग बचावें। हम तुम्हारी भाषा में अपना दुःख नहीं समझा सकते, और आप लोग हमारी भाषा नहीं जानते। नहीं तो क्या हममें से किसी को कोई मारता, तो हम भी आप लोगों के सदृश अपने मारनेवालों को न्यायव्यवस्था से फाँसी पर न चढ़वा देते ? हम इस समय अतीव कष्ट में हैं, क्योंकि कोई भी हमको बचाने में उद्यत नहीं होता। और जो कोई होता है, तो उससे मांसाहारी द्वेष करते हैं।

अस्तु, वे स्वार्थ के लिये द्वेष करो तो करो, क्योंकि **'स्वार्थी दोषं न पश्यति।'** जो स्वार्थ साधने में तत्पर हैं, वह अपने दोषों पर ध्यान नहीं देते, किन्तु दूसरों को हानि हो तो हो, मुझको सुख होना चाहिए। परन्तु जो उपकारी हैं, वे इनके बचाने में अत्यन्त पुरुषार्थ करें। जैसा कि आर्य लोग सृष्टि के आरम्भ से आज तक वेदोक्त रीति से प्रशंसनीय कर्म करते आये हैं, वैसे ही सब भूगोलस्थ सज्जन मनुष्यों को करना उचित है।

धन्य है, आर्यावर्त्त-देशवासी आर्य लोगों को, कि जिन्होंने ईश्वर के सृष्टिक्रम के अनुसार परोपकार ही में अपना तन-मन-धन लगाया और लगाते हैं, इसीलिए आर्यावर्त्तीय राजा, महाराजा, प्रधान और धनाढ्य लोग आधी पृथिवी में जंगल रखते थे, कि जिससे पशु और पक्षियों की रक्षा होकर ओषधियों का सार दूध आदि पवित्र पदार्थ उत्पन्न हों। जिनके खाने-पीने से आरोग्य, बुद्धि-बल पराक्रम आदि सद्गुण बढ़ें। और वृक्षों के अधिक होने से वर्षा-जल और वायु में आर्द्रता और शुद्धि अधिक होती है। पशु और पक्षी आदि के अधिक होने से खात भी अधिक होता है।

परन्तु इस समय के मनुष्यों का इसके विपरीत व्यवहार है कि जंगलों को काट और कटवा डालना, पशुओं को मार और मरवा खाना, और विष्ठा आदि का खात खेतों में डाल अथवा डलवाकर रोगों की वृद्धि करके संसार का अहित करना, स्वप्रयोजन साधना, और परप्रयोजन पर ध्यान न देना, इत्यादि काम उलटे हैं।

'विषादप्यमृतं ग्राह्यम्' सत्पुरुषों का यही सिद्धान्त है कि विष से अमृत लेना। इसी प्रकार गाय आदि का मांस विषवत् महारोगकारी को छोड़कर, उनसे उत्पन्न हुए दूध आदि अमृत रोगनाशक हैं, उनको लेना। अतएव इनकी रक्षा करके विषत्यागी और अमृतभोजी सबको होना चाहिए।

क्रमश ....

संध्या काल

कार्तिक-मास, हेमन्त-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(01 नवम्बर 2020 से 30 नवम्बर 2020)
प्रातः कालः 6 बजकर 15 मिनट से (6.15 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 00 मिनट से (6.00 P.M.)

मार्गशीर्ष-मास, हेमन्त-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(01 दिसम्बर 2020 से 30 दिसम्बर 2020)
प्रातः कालः 6 बजकर 30 मिनट से (6.30 A.M.)
सांय कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 P.M.)

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

सत्र का अनुभव जीवन के महत्वपूर्ण तथ्यों को समझने व समझाने के काबिल बनाने वाला रहा। अपने आप में कुछ आवश्यक राष्ट्रभक्ति उत्पन्न करने व धर्म को समझने का मार्गदर्शन मिला। अपने जीवन के कुछ अधूरे प्रश्न व जानकारियाँ प्राप्त की। जो भावी जीवन का आधार बनाने में सहायक रहेंगी। हम अपने पूर्वजों के सिद्धान्तों के नियमों की पालना करने की प्रतिज्ञा करते हैं। नमस्ते!

नाम : संदीप पांचाल, आयु : 33 वर्ष, योग्यता : 10, कार्य : मुनीम, पता : करनाल, हरियाणा।

सत्र बहुत जरुरी था मेरे जीवन के इस पडाव में, मैं बहुत प्रभावित हूँ गुरुजी (प्रवक्ता) के व्याख्यान् से और अब मैं अपने समय को व्यर्थ न कर आर्ष ग्रन्थों, सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ने में लगाऊँगा। मुझे लगता है गुरुजी के मन में राष्ट्र की अवस्था को लेकर गहरी चोट है जिसका प्रभाव मेरे दिल पर भी पड़ा। मैं वेदों का अध्ययन करना चाहूँगा। राष्ट्र की मुश्किलें पहाड़ जैसी महसूस होती हैं परन्तु मैं प्रयास फिर भी करुंगा। इस सत्र में मुझे दो दिन की कीमत समझ में आई, मैं अपनी योग्यता को बढ़ाने में अपना समय लगाऊँगा।

मैं यथासम्भव प्रयास करुंगा अपने कुछ नास्तिक मित्रों को आर्य बनाने का व अपने विद्यार्थियों को तो मैं आर्य बनाकर ही छोडूंगा।

नाम : दुष्यन्त, आयु : 20 वर्ष, योग्यता : 12, कार्य : अध्यापक, पता : मोहन नगर, कुरुक्षेत्र, हरियाणा।

द्विदिवसीय आर्य निमात्री सत्र अत्यन्त उत्कृष्ट रहा। आचार्य श्री ने सर्वप्रथम वर्तमान के आड़म्बरों से परिचित कराया एवं वेदों की आज्ञा को विस्तार से समझाया एवं उपाय बताये। आचार्य श्री ने वेदों की आज्ञा के उल्लंघन के परिणाम को उदाहरण से समझाया एवं अत्यन्न उत्साहशील गीतों के माध्यम से राष्ट्र प्रेम की भावना को बढ़ाने के साथ उसके मर्म को भी समझाया। आचार्य श्री ने सन्ध्योपासना के महत्व एवं विधि को भी समझाया व सिखाया। आचार्य श्री ने अनेक उदाहरणों एवं इतिहास की घटनाओं से भूत-प्रेत, आत्मा के सही अर्थ को समझाया एवं भ्रांतियों एवं अड़म्बरों से बाहर निकाला। आचार्य श्री ने आर्यावर्त्त की वर्तमान सीमा का ज्ञान कराया एवं रक्षार्थ हेतु उपाय सिखाये।

नाम : ऋषिकेश साहू, आयु : 22 वर्ष, योग्यता : स्नातक, कार्य : विद्यार्थी, पता : बांदा उत्तर प्रदेश, भारत।

तथ्यपूर्ण वार्ता व शिक्षा। भ्रम मुक्तिपूर्ण

राष्ट्र की ओर उन्मुख व राष्ट्र सुरक्षा की ओर अग्रसर करने का प्रयास रहा। धर्म, जाति, संस्कृति व आड़म्बरों आदि के भ्रमित मार्ग से सही मार्ग की ओर पथ प्रदर्शन किया गया। हम आर्य थे, हमे याद दिलाया गया, यह हमारा राष्ट्र है, इसे प्रमाण सहित बताया गया।

यहाँ किसी का अनुसरण करने को बाध्य नहीं किया गया, न ही मनोविज्ञान के किसी भी तत्थ का सहारा लिया गया। सही को सही तथा गलत को गलत, पूर्ण रूप से कहा गया।

स्वयं को इस योग्य बनाना कि आवश्यकता के समय, बल, बुद्धि, नीति, विचार तथा आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करवा सकें।

नाम : अंकिता साहू, आयु : 24 वर्ष, योग्यता : परास्नातक, कार्य : विद्यार्थीनी, पता : बांदा उत्तर प्रदेश, भारत।

मैं पूर्व में मूर्तिपूजक था सत्र के अनुभव के बाद में अब कभी मूर्ति-पूजा नहीं करुंगा व अब मुझे ईश्वर का सही ज्ञान हुआ है मैं आगे भी निरंन्तर ईश्वर के बारे में सही-सही जानने का प्रयास व अष्टांग योग भी सीखूंगा व साथ-साथ ही देश की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करुंगा, पूरे देश व दुनियाँ को आर्य बनाने का प्रयास करता रहूँगा।

आर्थिक सहयोग के साथ-साथ में स्वाध्याय करके लोगों को आर्य बनने के लिए प्रेरित करता रहूँगा।

नाम : संतोष सिंह, आयु : 29 वर्ष, योग्यता : बी.ए., कार्य : विद्युत विभाग, पता : मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत।

मैंने यह आर्य सत्र करने से पहले अपने निजी जीवन में अनेक भ्रांतियाँ पैदा की हुई थी, कुछ अनसुलझे पहलु बार-बार जीवन और बुद्धि में विषय अवस्थाएँ पैदा करते थे। लेकिन इस सत्र में उपस्थित होने के बाद वे विषय तो साफ अवस्था में चित में संग्रहित हुए, साथ में आगे के जीवन के बारे में भी मार्ग प्रशस्त हुआ। मेरे और मेरे देश के अतीत और वर्तमान की अनेक अनभिज्ञ अवस्थाएं, जिनसे चाहे और अनचाहे मैं मुँह फेर लिया करता था। लेकिन आज उन बुरी अवस्थाओं के बारे में जानकर आज मन और बुद्धि बहुत व्याकुल हो उठी और उनसे बाहर आने के लिए एक अलग तडप पैदा हुई। आज मन कर रहा है कि मैं तो स्वयं बदलूँ साथ में मेरे रिश्तेदार और विशेषत: मेरी भार्या और मेरी सन्तानों को तो आज इस विपरीत और विषम अवस्था की मौजूदगी से बाहर लेकर आने का पूरा प्रयास करूँ। जय आर्य, जय आर्यावर्त।

अब तक मैंने कोई सहयोग नहीं किया है, लेकिन आगे जरूर सम्भवत: और मेरे अवस्था अनुरूप सहयोग अवश्य करुँगा।

नाम : मनीष कुमार, आयु : 32 वर्ष, योग्यता : डी.फार्मा, बी.ए.एम.एस., कार्य : डॉक्टर, पता : चरखी दादरी, हरियाणा।

मुझे आज बड़ी आत्मसन्तुष्टि हो रही है कि जो हमें चाहिये था वह मिल गया हमारे देश में अगर हमें ही अधिकार नहीं मिले तो बड़े शर्म का विषय है आचार्य जी हम बहुत खुशी महसूस करते हैं कि जो आपने हमें बताया आपका आभार, आगे हमारी जहाँ भी आवश्यकता पड़ेगी हम पूरे मनो-योग से तैयार हैं जय हिन्द जय भारत अमरपाल जी का बहुत बड़ा अहसान जो हमे यहाँ रोका।

जहाँ भी आप मुझे पुकारोगे मैं वहाँ खड़ा मिलूगां।

नाम : विश्वास आर्य, आयु : 22 वर्ष, योग्यता : 12., कार्य : खेती, पता : नकुड़, सहारनपुर, भारत।

आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।